बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 182

जीएसटी में न हो कटौती

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) के बारे में निर्णय लेने वाली जीएसटी परिषद की इस हफ्ते होने वाली बैठक में कर दरों के बारे में चर्चा होने की संभावना है। जहां मौद्रिक नीति समिति नीतिगत दरों पर फैसला अगले महीने करेगी वहीं मौजूदा आर्थिक स्थिति से परेशान उद्योग जगत ने जीएसटी परिषद से राहत मिलने की उम्मीदें लगाई हुई हैं। लेकिन अपेक्षा से अधिक तीव्र सुस्ती के दौर में जीएसटी दरों में कटौती करना इतना आसान नहीं है। सैद्धांतिक तौर पर यह कहा जा सकता है कि जीएसटी दरें कम करने से मांग बढ़ाने में मदद मिलेगी और इससे राजस्व क्षति की भी एक हद तक भरपाई की जा सकेगी। उद्योग जगत के कई क्षेत्रों, खासकर ऑटो क्षेत्र की तरफ से जीएसटी दर कम करने की मांग जोरशोर से की जा रही है। ऑटो क्षेत्र में पिछले कई महीनों से बिक्री काफी कमी आई है। लेकिन परिषद को इस समय कई कारणों से दरें कम करने से परहेज करना चाहिए।

पहला, किसी क्षेत्र के लिए केंद्रित कर कटौती से यह कर प्रणाली कमजोर होगी और फिर अन्य क्षेत्रों से भी ऐसी मांगें आएंगी। ऑटो के अलावा बिस्कुट एवं सीमेंट कारोबार भी राहत की राह देख रहे हैं। अगर परिषद क्षेत्र-केंद्रित राहत देना शुरू करती है तो फिर यह सूची बढ़ती ही जाएगी। दूसरा, इस समय कर राजस्व को बनाए रखना बेहद अहम है। इस समाचारपत्र में ही प्रकाशित हो चुका है कि अगस्त तक उपकर संग्रह और राज्यों को वितरित क्षतिपूर्ति के बीच का अंतर 24,000 करोड़ रुपये हो चुका है। जीएसटी संग्रह के अनुमान से कम रहने से केंद्र सरकार भी असंगत रूप से प्रभावित होगी क्योंकि इस कमी की भरपाई उसे ही करनी होगी। किसी भी सूरत में केंद्र सरकार का राजस्व लक्ष्य से काफी पीछे रहने के आसार हैं लिहाजा उसे बजट लक्ष्य पूरा करने के लिए 18 फीसदी राजस्व वृद्धि की जरूरत है। अब तक के रुझानों से यही लगता है कि केंद्र सरकार के राजस्व में दो लाख करोड़ रुपये से भी अधिक कमी पड़ सकती है। ऐसे में जीएसटी दरों में कटौती से सरकार की मुश्किलें बढ़ेंगी ही।

भले ही भारतीय रिजर्व बैंक से 58,000 करोड़ रुपये की अतिरिक्त पूंजी मिलने से सरकार को कुछ मदद मिलेगी लेकिन वह कर राजस्व एवं क्षतिपूर्ति का अंतर पाटने के लिए नाकाफी होगा। ऐसे में सरकार को या तो व्यय कम करना होगा या फिर अपनी उधारी बढ़ानी होगी। इन दोनों ही कदमों का अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक असर होगा। सरकार ब्याज भुगतान और वेतन जैसे अधिकांश राजस्व व्ययों में कटौती नहीं कर सकती है लिहाजा उसे अपने पूंजीगत व्यय में ही कटौती करनी होगी। दूसरी तरफ अधिक उधारी से अर्थव्यवस्था में जमाओं पर सरकार की दावेदारी बढ़ेगी और निजी क्षेत्र की गतिविधि प्रभावित होगी। ऐसी खबरें भी आई हैं कि सरकार बजट उधारी एवं व्यय में कमी लाने की कोशिश कर रही है। इसका स्वागत किया जाना चाहिए। इससे पारदर्शिता आएगी और बजट आंकड़े भी अधिक विश्वसनीय बनेंगे। लेकिन अगर राजस्व संग्रह कम रह जाता है तो सरकार इस दिशा में बहुत आगे नहीं बढ़ सकती है। इस तरह से सरकार को दरों में कटौती की क्षेत्रवार मांगों पर ध्यान देने के बजाय लंबी अवधि में एक समझदार रणनीति अपनानी होगी। इसके तहत 28 फीसदी दायरे में आने वाली कुछ वस्तुओं एवं सेवाओं को 18 फीसदी दायरे में लाना और निचले दायरे वाली कुछ वस्तुओं एवं सेवाओं की दर बढ़ाई जा सकती है। इस तरह परिषद धीरे-धीरे कर स्लैब की दो-तीन श्रेणियां बना सकती है। ऐसा होने पर जीएसटी में सुधार लाने के साथ ही कर संग्रह की गिरावट भी कम करने में मदद मिलेगी। परिषद को जीएसटी फाइलिंग सुगम बनाने और अनुपालन बढ़ाने पर भी ध्यान देना चाहिए। बड़े पैमाने पर धांधली एवं फर्जी बिलों के मामले सामने आए हैं। परिषद को इन मसलों पर तत्काल ध्यान देने को प्राथमिकता देनी चाहिए।

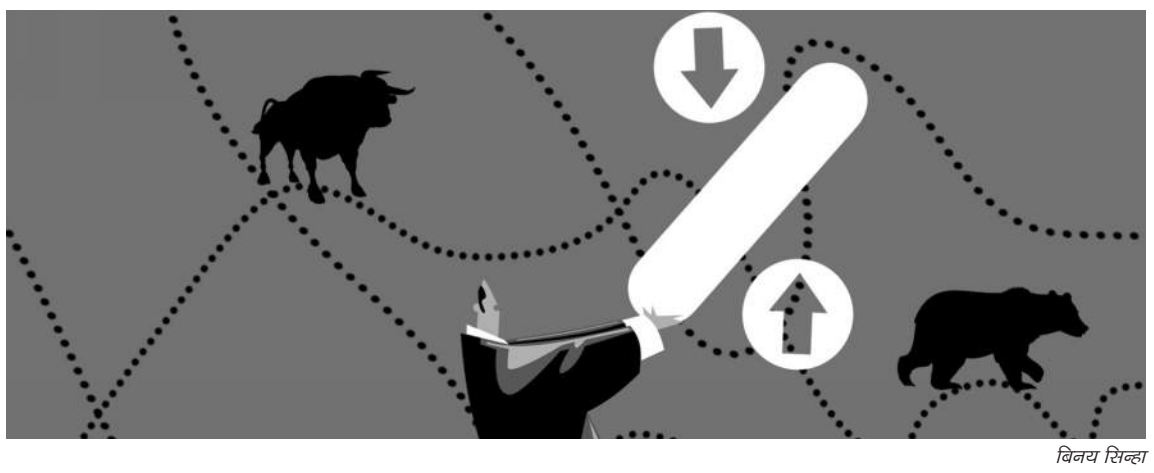

बिनय सिन्हा

आर्थिक वृद्धि की क्षीण होती संभावनाएं

भारत के नीतिगत एवं संस्थागत अवरोधों को देखते हुए आर्थिक वृद्धि को मौजूदा स्तर से बढ़ा पाना खासा मुश्किल होगा। समस्या के संबंधित पहलुओं पर रोशनी डाल रहे हैं **शंकर आचार्य**

आठ महीने पहले बिज़नेस स्टैंडर्ड में प्रकाशित अपने लेख में मैंने वित्त वर्ष 2019-20 में आर्थिक वृद्धि सात फीसदी से भी नीचे, संभवत: छह फीसदी के आसपास रहने की आशंका जताई थी। उस समय कुछ अर्थशास्त्रियों ने मुझ पर अधिक निराशावादी होने का आरोप लगाया था। वजह यह थी कि इस वित्त वर्ष में वृद्धि दर के 7-8 फीसदी रहने के तमाम घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय अनुमान सामने आ रहे थे। जुलाई में पेश आर्थिक समीक्षा ने 2019-20 में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में सात फीसदी वृद्धि का अनुमान जताया जबकि आम बजट में वृद्धि दर के आठ फीसदी रहने की संभावना जताई गई थी। यहां तक कि अगस्त की शुरुआत में भी भारतीय रिजर्व बैंक ने वृद्धि दर के 6.9 फीसदी रहने का अधिक सटीक अनुमान जताया था। लेकिन पहली तिमाही में वृद्धि दर के पांच फीसदी ही रह जाने के आधिकारिक आंकड़े सामने आने के बाद पुराने अनुमान असंगत लगने लगे हैं। यहां तक कि छह फीसदी वृद्धि का मेरा पुराना अनुमान भी अब नामुमकिन लगने लगा है। विमर्श अब इस पर होने लगा है कि मंदी कहीं और मार तो नहीं डालने वाली है। यह दौर कब तक चलेगा और मध्यम अवधि में क्या संभावनाएं रह गई हैं? इन बिंदुओं पर मैं कुछ शुरुआती राय रख रहा हूं लेकिन आने वाले समय में इनमें बदलाव भी होगा।

इतना जरूर है कि अगली दो-तीन तिमाहियों में जीडीपी वृद्धि के सरकारी आंकड़े पांच फीसदी से भी नीचे रह सकते हैं। इसके पीछे तीन कारण हैं। पहला, हालिया समय में अमेरिका, चीन, जर्मनी, ब्रिटेन, फ्रांस और जापान को आर्थिक गतिविधियां शिथिल पड़ने का अहसास होने लगा है। अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ), विश्व बैंक और आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओईसीडी) जैसी अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं 2019 और 2020 के लिए अपने वृद्धि अनुमानों को संशोधित करने में लगी हैं। व्यापार युद्ध के असर, अमेरिकी व्यापार विस्तार का दम फूलने और ब्रेक्सिट के मुश्किल क्रियान्वयन का खतरा होने से यह हो रहा है। सवाल है कि वैश्विक सुस्ती कब तक चलेगी और इसका असर कितना गहरा होगा? इन सवालों का फिलहाल कोई साफ जवाब नहीं है।

दूसरा, घरेलू मोर्चे पर जून के बाद कंपनी आय, औद्योगिक उत्पादन, खरीद प्रबंधक, विदेश व्यापार, कर राजस्व, वित्तीय साख, वाहनों की बिक्री और सीमेंट खपत जैसे तमाम उच्च आवृत्ति संकेतक (एचएफआई) बिगड़ती स्थिति की तरफ ही इशारा कर रहे हैं। इन संकेतकों का असर वित्त वर्ष के बाकी महीनों में आधिकारिक जीडीपी अनुमानों में भी नजर आएगा, खासकर 2011-12 आधारित राष्ट्रीय आय शृंखलाओं की कमजोरी के चलते।

तीसरा, सरकार के स्तर पर आर्थिक वृद्धि संकट गहराने की स्वीकारोक्ति काफी देर से हुई है और अभी तक नीतिगत प्रतिक्रिया भी एक हद तक दुविधापूर्ण है। लगभग दिशाहीन बजट और फिर कई घोषणाओं का पलटना इस पर मुहर लगाते हैं। इसी तरह का बेमतलब एवं संभवत: नुकसानदायक कदम सार्वजनिक बैंकों के विलय का भी है।

मध्यम अवधि की संभावनाएं

वर्ष 2019-20 के बाद क्या होगा? क्या हम अगले पांच वर्षों में तीव्र आर्थिक वृद्धि देख पाएंगे? पांच साल पहले योजना आयोग भंग होने के बाद से ही मध्यम अवधि की वृद्धि संभावनाएं एवं परिदृश्य तैयार कर पाने की संस्थागत क्षमता गायब हो चुकी है। गहरे मंथन के बगैर ही वर्ष 2024 तक भारतीय अर्थव्यवस्था का आकार पांच लाख करोड़ डॉलर कर देने का ऐलान कर दिया गया है। सुस्त पड़ती विश्व अर्थव्यवस्था के अलावा भारत के समक्ष कई संस्थागत एवं नीतिगत अवरोध भी हैं जो उसे 2003-11 का तीव्र वृद्धि वाला दौर वापस लाने से रोकते हैं। इनमें से कुछ अहम अवरोध इस तरह हैं:

■ वर्ष 2011 की तुलना में रोजगार परिदृश्य काफी खराब है। कामकाजी उम्र वाली जनसंख्या का आधे से भी कम हिस्सा इस समय काम कर रहा है या काम की तलाश में है। यह भारत की अब तक दर्ज सबसे कम श्रम भागीदारी दर है जो जी-20 देशों में भी सबसे कम है। यह स्थिति आपूर्ति के मोर्चे पर शिक्षा एवं कौशल के घटिया स्तर और मांग के मोर्चे पर जटिल एवं सख्त श्रम कानूनों एवं नियमों की दोहरी मार का नतीजा है। नई श्रम संहिता में न्यूनतम वेतन सीमा बढ़ाए जाने से औपचारिक क्षेत्र में रोजगार सृजन की संभावना और भी कम हो सकती है। ऐसे में भारत अपना जनांकिकीय लाभांश गंवाता जा रहा है।

■ विनिमय दर खासी बढ़ जाने से पिछले सात वर्षों में निर्यात ठहराव की स्थिति बन गई है और प्रतिस्पर्द्धा कर सकने वाला घरेलू उत्पादन हतोत्साहित हुआ है। इससे व्यापार और चालू खाते का घाटा बढ़ गया है जिसने भारत को कच्चे तेल के दाम और पूंजी प्रवाह में उठापटक के प्रति भारत को असुरक्षित बना दिया है। मुद्रा का अधिमूल्यन होने से गत दो वर्षों में संरक्षणवादी रवैया और सीमा शुल्क भी बढ़ा है। इसके अलावा क्षेत्रीय समग्र आर्थिक भागीदारी (आरसेप) जैसे क्षेत्रीय व्यापार समझौतों के प्रति दुर्भावना भी जोर पकड़ने लगी है।

■ सार्वजनिक क्षेत्र के वर्चस्व वाली बैंकिंग प्रणाली गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों का भारी बोझ बढ़ने से तनावग्रस्त है जिससे नए कर्ज दे पाने की क्षमता घटी है। हालिया घटनाक्रम पर गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) की समस्या भारी पड़ रही है। एनबीएफसी क्षेत्र आईएलऐंडएफएस के धराशायी होने के बाद गहरे दबाव में है। कर्ज के बोझ से दबी कंपनियों की बैलेंस शीट भी नए निवेश को हतोत्साहित करती है।

■ उच्च राजकोषीय घाटे और सार्वजनिक क्षेत्र की उधारी जरूरतों से भरे दशक में ब्याज दरें चढ़ गईं और निजी निवेश को निकाल बाहर किया। संकीर्ण राजस्व आधार और लोकलुभावन कार्यक्रमों पर खर्च की बढ़ती मांग को देखते हुए राजकोषीय शिथिलता वाला रुख आगे भी जारी रहने की संभावना है।

■ कृषि विपणन का ढांचा बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो चुका है और खाद्यान्नों के कीमत निर्धारण, खरीद, भंडारण एवं वितरण की सार्वजनिक प्रणाली भी बेहद महंगी एवं अक्षम साबित हो चुकी है। खाद्य, उर्वरक एवं सिंचाई जल पर भारी सब्सिडी दिए जाने से उत्पादक एवं ग्रामीण आधारभूत ढांचा सार्वजनिक निवेश से वंचित रह जाता है। कृषि क्षेत्र पानी की किल्लत और जलवायु परिवर्तन की वजह से भी मुश्किलों का सामना कर रहा है।

■ ढांचागत सेवाएं अपेक्षाकृत कमजोर एवं अक्षम हैं। सरकारी नियंत्रण वाली अधिकांश बिजली वितरण कंपनियों का घाटे में चलना इसका एक उदाहरण है। बिजली कंपनियां कृषि एवं अन्य विशेषाधिकार-प्राप्त उपभोक्ता समूहों को दी जाने वाली भारी सब्सिडी और परिचालन कमजोरियों से जूझ रही हैं।

■ औपनिवेशिक विरासत वाली अफसरशाही का जटिल, निरंकुश एवं उदासीन ढांचा आर्थिक गतिविधियों पर गहरा असर डालता है। प्रशासनिक निर्णय-निर्माण के प्रति बढ़ता केंद्रीकृत रवैया समस्या को और भी गंभीर बना रहा है।

■ न्यायिक प्रणाली एवं पुलिस संसाधनों की भारी कमी से जूझ रही हैं और गहरे दबाव में है। इससे कानून व्यवस्था कमजोर हुई है और वाणिज्यिक अनुबंधों का अनुपालन भी प्रभावित हुआ है।

नीतिगत एवं संस्थागत अवरोधों की इस चुनौतीपूर्ण पृष्ठभूमि में भारत के लिए आर्थिक वृद्धि को मौजूदा स्तर से बहुत अधिक बढ़ा पाना मुश्किल होगा। भविष्य को लेकर अंतर्निहित अनिश्चितता होने से अगले पांच वर्षों में जीडीपी की औसत वृद्धि दर 5-6 फीसदी दायरे में ही बनी रह सकती है। इतनी कम वृद्धि दर के रोजगार सृजन, अंतर-क्षेत्रीय असमता, राजनीतिक स्थिरता और सामाजिक तनाव के अलावा घरेलू एवं बाहरी सुरक्षा और भारत की अंतरराष्ट्रीय भूमिका पर व्यापक एवं नकारात्मक निहितार्थ होंगे।

(लेखक इक्रियर के मानद प्रोफेसर और भारत सरकार के पूर्व मुख्य आर्थिक सलाहकार हैं। लेख में व्यक्त विचार निजी हैं)

प्रधान सचिव व प्रधान सलाहकार के साथ पीएमओ में नई व्यवस्था

दिल्ली डायरी

ए के भट्टाचार्य

प्रधान सचिव पीके मिश्रा और प्रधान सलाहकार पीके सिन्हा के साथ प्रधानमंत्री कार्यालय को एक नई व्यवस्था मिली है और यह निजाम पिछले पांच साल की तरह नहीं होगा।

प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव के कार्यालय के गठन को अभी 50 साल नहीं हुए हैं। इसका गठन सन 1971 में किया गया था जब इंदिरा गांधी ने परमेश्वर नारायण हक्सर को अपना प्रधान सचिव बनाया था। हक्सर दिसंबर 1971 से फरवरी 1973 तक इस पद पर रहे। उनके बाद 11 और लोग इस पद पर रह चुके हैं।

पिछले सप्ताह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने प्रमोद कुमार मिश्रा को प्रधान सचिव नियुक्त किया। उनसे पहले नृपेंद्र मिश्रा इस पद पर थे। उन्हें मई 2014 में प्रधान सचिव नियुक्त किया गया था और वह पांच साल से अधिक समय तक इस पद पर रहे।

इस प्रक्रिया में पीके मिश्रा पिछली लगभग आधी सदी में प्रधानमंत्री का प्रधान सचिव बनने वाले 13वें व्यक्ति हैं। प्रधानमंत्री के प्रधान सचिवों की सरकार में अहम भूमिका होती है। वे शासन-प्रशासन की जटिल दुनिया में प्रधानमंत्री की मदद करते हैं और साथ ही यह सुनिश्चित करते हैं कि अफसरशाही तथा मंत्री सरकार की राजनीतिक और आर्थिक नीतियों को लागू करें। वे सलाहकार और कार्यकारी, दोनों भूमिका निभाते हैं।

प्रधान सचिव का कार्यकाल इस बात का संकेत नहीं है कि सरकार में उसकी भूमिका कितनी कारगर रही है। टीकेए नायर सर्वाधिक समय (7 साल 4 महीने) तक इस पद पर रहे थे लेकिन उन्हें किसी कारगर भूमिका के लिए याद नहीं किया जा सकता है। लेकिन कम समय तक प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव रहे कई लोगों ने सरकार के कामकाज पर प्रभाव डाला। हक्सर केवल 15 महीने इस पद पर रहे लेकिन इससे पहले वह चार साल प्रधानमंत्री के सचिव रहे थे। बीजी देशमुख ने आठ महीने राजीव गांधी और 12 महीने वीपी सिंह के साथ काम किया।

हालांकि इसमें कुछ अपवाद भी हैं जिन्होंने संबंधित सरकारों के कामकाज पर अपनी गहरी छाप छोड़ी। इनमें पीसी एलेक्जेंडर, अमर नाथ वर्मा और ब्रजेश मिश्र शामिल थे। एलेक्जेंडर ने तीन साल आठ महीने तक इंदिरा गांधी के साथ काम किया। वर्मा करीब पांच साल पीवी नरसिंह राव के साथ रहे जबकि मिश्र छह साल और दो महीने अटल बिहारी वाजपेयी से जुड़े रहे। मिश्र राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार भी थे और सरकार पर उनका गहरा असर था।

इस पद पर रहने वाले अन्य लोगों में वी शंकर (दो साल और तीन महीने), एस के मिश्रा (छह महीने), टीआर सतीशचंद्रन (एक साल), एनएन वोहरा (आठ महीने) और पुलक चटर्जी (दो साल और सात महीने) शामिल हैं।

प्रधान सचिवों की लंबी फेहरिस्त से साफ है कि प्रधानमंत्री इस पद पर वरिष्ठ अफसरशाह को नियुक्त कर अपने कार्यालय को मजबूत करना चाहते हैं। पिछले 50 साल में चरण सिंह को छोड़कर हर प्रधानमंत्री ने अपने कार्यालय में प्रधान सचिव नियुक्त किया।

मोरारजी देसाई भले ही सशक्त प्रधानमंत्री कार्यालय के आलोचक थे लेकिन उन्होंने भी वी शंकर को अपना प्रधान सचिव बनाया। उन्होंने जो कुछ बदलाव किया, वह सतही था। देसाई ने अपने कार्यालय का नाम बदल दिया। इंदिरा गांधी इसे प्रधानमंत्री सचिवालय (पीएमएस) कहती थीं लेकिन देसाई ने इसे प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ) नाम दिया। इंदिरा गांधी के पीएमएस में कर्मचारियों की संख्या 229 थी। देसाई ने पीएमओ में कर्मचारियों की संख्या घटाकर 211 कर दी। 2016 तक मोदी ने यह संख्या बढ़ाकर 397 कर दी।

इस पृष्ठभूमि को देखते हुए पीके मिश्रा पीएमओ में अपनी छाप कैसे छोड़ सकते हैं? दो कारणों से वह बेहतर स्थिति में हैं। पहला कारण यह है कि उनके पास प्रधानमंत्री कार्यालय में पांच साल तक काम करने का अनुभव है। इस दौरान वह प्रधानमंत्री के अतिरिक्त प्रधान सचिव रहे। वह हक्सर की तरह होंगे जो चार साल तक इंदिरा गांधी के सचिवालय में सचिव रहने के बाद प्रधान सचिव बने थे। पीके मिश्रा के लिए यह पद नया हो सकता है लेकिन प्रधानमंत्री कार्यालय में वह नए नहीं हैं और इस व्यवस्था से अच्छी तरह वाकिफ हैं।

दूसरी वजह यह है कि अपने पूर्ववर्ती नृपेंद्र मिश्रा की तरह उन्हें अतिरिक्त प्रधान सचिव से नहीं निपटना होगा। नृपेंद्र मिश्रा को अपनी कुछ जिम्मेदारियां पीके मिश्रा के साथ साझा करनी पड़ती थीं। अफसरशाही में इसे शक्तियों को कमजोर करने के रूप में देखा जाता है।

मौजूदा व्यवस्था में संभव है कि नए प्रधान सचिव को कोई जिम्मेदारी साझा नहीं करनी पड़ेगी क्योंकि अतिरिक्त प्रधान सचिव पद पर किसी को नियुक्त नहीं किया गया है। प्रदीप कुमार सिन्हा पीएमओ में हैं लेकिन उन्हें प्रधानमंत्री का प्रधान सलाहकार बनाया गया है। अभी साफ नहीं है कि क्या पदनाम में बदलाव का मतलब प्रधान सचिव की शक्तियों को कमजोर करने से रोकना है।

इस परिभाषा के मुताबिक प्रधानमंत्री के प्रधान सलाहकार की भूमिका अतिरिक्त प्रधान सचिव के समान नहीं हो सकती। प्रधान सचिव पीके मिश्रा और प्रधान सलाहकार पीके सिन्हा के साथ पीएमओ को एक नई व्यवस्था मिली है और यह निजाम पिछले पांच साल की तरह नहीं होगा। यह कैसे अलग होगा और क्या इससे पीएमओ की भूमिका ज्यादा कारगर होगी, यह तो आने वाला समय बताएगा।

कानाफूसी

जेटली पॉइंट

दिवंगत अरुण जेटली जब 1990 के दशक में सक्रिय राजनीति में लौटे तो वह रोज सुबह दिल्ली के लोदी गार्डन में अपने दोस्तों से मुलाकात किया करते थे। वह पहले पार्क के एकाध चक्कर काटते और बाद में बातचीत करने के लिए एक जगह पर बैठ जाते। इस समूह में जेटली के स्कूल तथा कॉलेज के साथी, दोस्त, वकील, पत्रकार और विभिन्न राजनीतिक दलों के नेता शामिल थे। उनमें से ही कोई एक सभी के लिए चाय ले आता था। रविवार को वहां चाय के साथ समोसे और कचौरी भी होती थीं। अब कांग्रेस नेता राजीव शुक्ला और पूर्व अटॉर्नी जनरल मुकुल रोहतगी समेत उनके कुछ दोस्त पार्क का रखरखाव करने वाली नई दिल्ली नगरपालिका परिषद को इस आशय का पत्र लिखने पर विचार कर रहे हैं कि पार्क में जिस जगह पर जेटली अपने दोस्तों से मुलाकात किया करते थे उसका नाम 'जेटली प्वाइंट' रखा जाए।

ब्रांड गोविंदा

मध्य प्रदेश सरकार ने फिल्म अभिनेता और पूर्व कांग्रेस सांसद गोविंदा को राज्य के लिए ब्रांड ऐंबेसडर के रूप में चुना है जिसकी जानकारी फिलाहल एक सूत्र ने दी। मुख्यमंत्री कमलनाथ अगले सप्ताह होने वाले राज्य निवेश सम्मेलन से ठीक पहले इसकी घोषणा करेंगे।

गोविंदा ब्रांड के तौर पर राज्य में पर्यटन और निवेश बढ़ावा देने में मदद करेंगे। मार्च महीने में उन्होंने राज्य सचिवालय में कमलनाथ से मुलाकात की थी लेकिन उस समय कमलनाथ के सहयोगी आर के मिगलानी ने बताया था कि अभिनेता मुख्यमंत्री के मित्र हैं, उन्होंने केवल इस नाते ही मुख्यमंत्री से मुलाकात की।

आपका पक्ष

जल संकट से निजात के उपाय जरूरी

जल संचय करना जरूरी हो गया है। आए दिन हम मीडिया में खबर आती है कि फलां राज्य में पानी की कमी हो गई है। अगर ऐसी स्थिति रही तो आने वाले समय में जल की कमी की समस्या गंभीर हो सकती है। हाल में तमिलनाडु में पानी का गंभीर संकट देखने को मिला। इस संकट का कारण मनुष्य ही है। मानव क्रियाकलापों की वजह से भूजल का स्तर घटता जा रहा है। पेड़ों की अंधाधुंध कटाई हो रही है, जिसका असर बारिश पर पड़ता है। लोग जंगल को साफ कर रहे हैं और कल कारखानों को बढ़ावा दे रहे हैं। अगर सभी लोग जल संचयन शुरू कर दें तो जलस्तर में बढ़ोतरी होगी। हम अपने घरों का पानी नाली के जरिये नदी और तालाब में बहा देते हैं। इसके बजाय हमें घर की चहारदीवारी के अंदर एक गड्ढा खोदकर घर से निकलने वाला पानी डालना चाहिए। राजस्थान में जल संचयन की व्यवस्था अधिक अपनाई जाती है। वर्ष 2019 में पहले की तुलना में जल समस्या में काफी बढ़ोतरी हुई है। चेन्नई के एक ग्रामीण क्षेत्र में जल की ऐसी समस्या उत्पन्न हुई कि वहां रेलगाड़ी के जरिये पानी मंगाया गया। आजकल अधिकतर नल खराब होते हैं या टूटे होते हैं। टूटे हुए नल से जल का रिसाव होता रहता है और इसकी मरम्मत सही समय पर नहीं होती है। अत: नगरपालिका को समय पर टूटे नल से पानी का रिसाव रोकने की व्यवस्था करनी चाहिए। नीति आयोग के अनुसार वर्ष 2030 तक जल की समस्या अत्यधिक बढ़ जाएगी। एक रिपोर्ट में बताया गया है कि करीब 70 प्रतिशत प्रदूषित पानी के साथ भारत जल गुणवत्ता सूचकांक में 122 देशों में 120वें पायदान पर है। इससे भारत में जल समस्या के बारे में पता चलता है। अत: हमें पानी की खपत कम करनी चाहिए।

शैलेश कुमार, मधुपुर

देश के कुछ सूखाग्रस्त इलाकों में रेलवे के द्वारा टैंकरों से पानी भेजा गया था

कौशल विकास और रोजगार की स्थिति

देश में कौशल विकास के लिए किए गए तमाम प्रयासों के बावजूद इसकी स्थिति बदहाल है। एक रिपोर्ट के अनुसार सिर्फ 23 प्रतिशत कार्यबल का ही कौशल विकास हुआ है। एक अन्य रिपोर्ट के मुताबिक नियोक्ताओं को अपनी रिक्तियों के लिए कौशलयुक्त कार्यबल नहीं मिल रहा है। इस प्रकार कौशल विकास की मांग और आपूर्ति के बीच का अंतर स्पष्ट है। देश में शिक्षित लोगों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है लेकिन उस अनुपात में रोजगार का सृजन नहीं हो पा रहा है। परिणामस्वरूप बेरोजगारी बढ़ रही है। सरकार द्वारा कौशल विकास के लिए सर्किल इंडिया कार्यक्रम, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना आदि प्रयास किए जा रहे हैं। लेकिन तमाम प्रयासों के बावजूद आजतक केवल 2.5 करोड़ लोगों को कौशल विकास योजनाओं का लाभ मिल पाया है जबकि लक्ष्य 2022 तक 30 करोड़ का है। अत: देश में कौशल विकास पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ताकि नवभारत के निर्माण के लिए सामाजिक-आर्थिक विकास को गति प्रदान किया जा सके। इसके लिए शिक्षा व प्रशिक्षण पर खर्च में वृद्धि, प्रशिक्षण की गुणवत्ता और संस्थानों का पर्याप्त मूल्यांकन, कौशल सर्वेक्षण, उद्योगों की भूमिका में वृद्धि, उद्यमशीलता को बढ़ावा देना होगा।

सुजीत कुमार, बिलासपुर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।